Shodh Drishti (An International Peer Reviewed Multidisciplinary Refereed Research Journal) Impact Factor : 7.0
Vol. 16, No. 5, May 2025 ISSN : 0976-6650

थेरियों की बस्ती में अभिव्यक्ति के स्वर

मेनका सिंह
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी०जी० कालेज, बुलानाला, वाराणसी

सारांश

समकालीन कवयित्री अनामिका ने काव्य संग्रह "टोकरी मे दिगंत" के अंक-एक थेरियों कि बस्ती" में इतिहास वर्तमान, यथार्थ और कल्पना को एक साथ देखा जा सकता है। बौद्धकालीन थेरियों के बहाने कवयित्री ने वर्तमान स्त्री के दुख, अनुभव आक्रोश एवं आकांक्षा को अभिव्यक्त किया है। देह से परे एक स्त्री की अपनी पहचान है अस्तित्व है। स्व के लिए संघर्षरत स्त्री अपने प्रति समाज के परंपरागत दृष्टिकोण से हट कर एक लोकतान्त्रिक दृष्टिकोण की मांग करती है जो उसकी बदल रही भूमिकाओं के साथ उसे स्वीकार कर उचित स्थान व सम्मान दे सके। अनामिका जी की कविता में स्त्रियाँ पुरुष विरोधी नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मकता की विरोधी है।

बीज शब्द : अभिव्यक्ति, थेरियां, पितृसत्तात्मकता।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री सदा से ही उपेक्षित रही है, अपने अधिकारों से अनभिज्ञ स्त्री समाज द्वारा किये गए अमानवीय व्यवहारों को अपनी नियति मानकर स्वीकार करती चली आ रही है। उसे धर्म एवं शिक्षा के योग्य नहीं समझा गया। बौद्ध काल से पहले महिलाओं को संन्यास लेने का अधिकार भी नहीं था।बुद्ध ने जब अपने शिष्य आनंद के कहने पर मठ के द्वार स्त्रियों के लिए खोले तो पहली बार स्त्रियों ने स्वंत्रता का स्वाद चखा और उन्हें आध्यात्मिक चिंतन एवं भिक्षुणी बनने का अधिकार प्राप्त हुआ। बुद्ध की शिष्याओं में अनेक जातियों एवं कुलो से ऐसी स्त्रियाँ थी जो मानसिक एवं दैहिक दुखों से मुक्त होकर अर्हत(पूर्ण मनुष्य) बनी, इन्ही अर्हतो को थेरी कहा गया। थेरियों ने अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति गीत के रूप में की जिसे बुद्ध वांग्मय में थेरी गाथा के नाम से जाना जाता है। "बुद्धत्व की प्राप्ति के पश्चात तथागत संबंधो के बंधन से मुक्त एक नए अनुष्ठान में जुट गये थे। मानवीय पीडाओं से युक्त संसार को करुणा में देख कर वे करुणापूता हो चुके थे। राजा शुद्धोदन के देहपात के पश्चात उनकी अपनी विमाता प्रजापति गौतमी के साथ पांच-सौ स्त्रियाँ भी प्रव्राजित हुई। कालांतर में भिक्षुणियों का एक संघ बन गया। तत्कालीन समाज में स्त्री-मुक्ति का वह अद्भुत दिन रहा होगा। इन सभी भिक्षुणियों ने नाना कुलों एवं नाना जीवन अवस्थाओं से आकार प्रवज्या ग्रहण की थी। सभी ने तथागत चरणों में बैठ कर धर्म साधना का अभ्यास किया था।कुछ भिक्षुणियां अपना जीवन अनुभव हमारे लिए थाती के रूप में छोड़ गयीं। यही मूल धन थेरी गाथा के नाम से प्रसिद्ध है"।[1]

समकालीन कवयित्री अनामिका ने अपने काव्य संग्रह "टोकरी में दिगंत" में थेरियों के बहाने वर्तमान स्त्री के अंतरमन एवं मुक्ति को स्वर दिया। केदारनाथ सिंह ने इस काव्य संग्रह पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि "यह पूरी काव्यकृति एक लम्बी कविता है जिसमे अनेक छोटे-छोटे दृश्य, प्रसंग और थेरियों के रूपक में लिपटी हुई हमारे समय की सामान्य स्त्रियाँ आती है"।[2]

इस काव्य संग्रह के अंक एक "थेरियों की बस्ती" में एक सामान्य स्त्री के अंतर्मन की इच्छाओ के रूपक में स्मृति, तृष्णा, भाषा, वितृष्णा, जिजीविषा, सुमंगला, तिल्लोत्मा, सुजाता, लल्लदेद, शांता आदि थेरियां आ-आकर कवयित्री से संवाद स्थापित करती है। एक संवेदनशील स्त्री हृदय होने के नाते कवयित्री थेरियों के रूप में वर्तमान स्त्री के दुःख को महसूस कर पाती हैं क्योंकि आज भी स्त्री की स्थिति में बहुत अधिक परिवर्तन नही हुआ वह आज भी मुक्ति की आकांक्षी है। अतीत से लेकर वर्तमान तक स्त्री को मानसिक रूप से गुलाम बनाने की प्रक्रिया आज भी जारी है "पुरुष अपनी स्त्रियों को एक गुलाम की तरह नहीं बल्कि एक इच्छुक गुलाम की तरह रखना चाहता है सिर्फ गुलाम नहीं बल्कि पसंदीदा गुलाम बनाये रखने के लिए उन्होंने सारे संभव रास्ते अपनाये है।"[3]

कवयित्री अनामिका विद्रोह नहीं समरसता की समर्थक है, उनकी पुरुषों से कोई प्रतिस्पर्धा या होड़ नहीं है। वह अपने लिए सही जगह की मांग करती है क्योंकि वर्तमान स्त्री अपने आप को एकमात्र वस्तु नहीं समझती उसका अपना अस्तित्व है,वह पुरुषों से समानता नहीं चाहती बल्कि स्वयं को मनुष्य समझे जाने की आकांक्षा। अनामिका अपने काव्य संग्रह "टोकरी में दिगंत" की भूमिका में लिखती है कि – स्त्री को सखा और बंधू समझने वाले, उन्हें बराबरी और मान देने वाले पुरुष आज भी कम ही है! प्रकृति ने उन्हें पाशविक बल तो ज्यादा दिया है पर आत्मबल और आत्मनिग्रह उतना नहीं दिया तभी सौंदर्य उनके लिए कब्जे की चीज़ हो गयी है, कब्जे की चीज़ होते होते स्त्रियाँ थक गयी ही है, इसलिए उनको बुद्ध और सम्बुद्ध न, नि ग्रहि पुरुष और योगी ही अच्छे लगते है, उनके मन में उनके लिए सहज आकर्षण जगता है जो उनके पीछे नहीं पड़ते है और अपनी सारी उर्जा इस योग्य बनने

पुराप्रवाह
क्रमांक 10, 2025

भोजपुर मंदिर : एक स्थापत्यिक अध्ययन

सरला सिंह*

कलात्मक अवशेषों की दृष्टि से मध्य भारत सदैव से ही आकर्षण का केंद्र बिंदु रहा है। इस क्षेत्र पर निरंतर कई वर्षों तक प्रतिहारों, परमारों, चंदेलों और कलचुरियों जैसे राजवंशों का शासन रहा, जिन्होंने समय–समय पर अपनी कलात्मक अभिरुचि को प्रदर्शित करते हुए विभिन्न वास्तुरूपों विशेषकर मंदिरों का निर्माण कराया। राजपूतकालीन जिन 36 कुलों के बारे में बात की जाती है उनमें से आबू पर्वत से संबंध रखने वाले राजवंशों में एक प्रमुख राजवंश परमार वंश भी था। यह एक क्षत्रिय कुल से संबंधित राजवंश था। इसकी उत्पत्ति पद्मगुप्त कृत नवसाहसांकचरित के अनुसार ऋषि वशिष्ठ ने ऋषि विश्वामित्र के विरूद्ध युद्ध में सहायता प्राप्त करने के लिए आबू पर्वत पर यज्ञ किया, जिससे प्रमार नामक पुरुष की उत्पत्ति हुई जो कि परमार वंश का आदिपुरुष कहलाया (भाटिया 1967ः 9)। परमार वंश की विभिन्न शाखाएँ थीं परंतु मालवा के परमार प्रमुख रूप से प्रसिद्ध हुए जिन्होंने लगभग तीन सौ वर्षों तक धार मालवा से लेकर विदिशा तक शासन किया। इनमें से सबसे महान परमार शासक भोज परमार (1000–1056 ई०) हुआ जिसका व्यक्तित्व बहुआयामी प्रतिभा से संपन्न था। उन्होंने वास्तुकला, फलित–ज्योतिष, नैतिकता, वैयाकरण, कोषकला, औषध विज्ञान, संगीत, धर्म, दर्शन, काव्य और सौंदर्यशास्त्र के 84 प्रसिद्ध ग्रंथों का संकलन किया। इसके साथ ही वास्तुकला से संबंधित प्रसिद्ध ग्रंथ समरांगण सूत्रधार में उन्होंने स्वयं को मानवीय परिवेश का वह शिल्पी कहा है जिसकी कल्पना में तर्क और भावना, रीति और करुणा एवं लालित्य पूर्ण रूप से समन्वित है (चक्रवर्ती 1991ः 5)।

इन परमार शासकों ने मालवा क्षेत्र में मंदिर निर्माण कला की एक विशिष्ट शैली, जिसे भूमिज शैली के नाम से जानते हैं, को प्रश्रय दिया और उससे संबंधित विभिन्न मंदिरों का निर्माण कराया। विभिन्न ग्रंथों के अध्ययन से पता चलता है कि, अकेले मालवा में राजा भोज ने 200 मंदिरों का निर्माण कराया था परंतु खेद का विषय है कि, उनमें से एक भी आज विद्यमान नहीं है (गांगुली 1933ः 271)। राजा भोज के द्वारा निर्मित एकमात्र मंदिर भोजपुर (विदिशा, रायसेन जिला) मध्यप्रदेश में स्थित है और वह भी अपूर्ण है (रेखाचित्र 1) (गांगुली 1933ः 271)।

11वीं से 12वीं शती के मध्य निर्मित भोजपुर का यह मंदिर आधुनिक मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से 32 किमी० दूर रायसेन जिले की गौहरगंज तहसील में है, जो राजा भोज के गुंजायमान व्यक्तित्व और मानव जीवन के अलौकिक और उसकी बहुमुखी समन्वयवादी दृष्टि का अनश्वर प्रमाण है (चक्रवर्ती 1991ः 5)।

वर्तमान समय में यह मंदिर अत्यंत विशाल रूप में खड़ा है जिसका गर्भगृह बाहर से 65 वर्गफुट और भीतर से 42 वर्गफुट है, जो 115 फुट लंबे, 82 फुट चौड़े और 13 फुट ऊँचे चबूतरे पर स्थित है। मंदिर में अति विशाल शिवलिंग स्थित है, जिसकी कुल ऊँचाई 26 फुट है। मंदिर के अंदर चार विशाल खंभे हैं जो अधूरे गुंबद का भार सँभालते दिखाई देते हैं। इनमें से प्रत्येक 40 फीट ऊँचा है और तीन खंडों में विभाजित है। स्तंभ दिखने में पतले हैं तथा विभिन्न मूर्तियों

*सहायक प्राध्यापिका, श्री अग्रसेन कन्या पी०जी० कॉलेज, वाराणसी, (संबद्ध: महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी)

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

समाज में महिलाओं की स्वस्थ्य, शिक्षा एवं सशक्तिकरण का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. सुनीता सिंह
असि. प्रो. समाजशास्त्र विभाग
अग्रसेन कन्य पी.जी. कालेज,
बुलानाला, वाराणसी

सारांश

किसी भी समाज की उन्नति व प्रगति उसके मानवीय संसाधनों स्त्रियों व पुरुषों के बीच समानता पर निर्भर करती है ये ही सामाजिक संरचना के आधार स्तम्भ होते हैं। पूर्ण एवं निरन्तर विकास के लिए आवश्यक है कि दोनों आधार स्तम्भ अर्थात् स्त्री व पुरुष मिलकर समाज निर्माण में योगदान दें। परन्तु अल्प विकसित व विकासशील देशों के सन्दर्भ में यह धारणा कोरी कल्पना ही साबित होती है। यद्यपि हमारे देश में महिलाओं को देवियों की मान्यता दी गयी है। लेकिन कालान्तर में उनके कार्य योगदान और उनकी प्रतिष्ठा को समाज की मुख्य धारा से दूर कर दिया गया। सिंधु सभ्यता में स्त्री रूपों को ही अधिक पूजा जाता था। वर्तमान युग में चाहे पुरूष हो या महिला प्रत्येक के लिए शिक्षा बहुत जरूरी है। आधुनिक युग विज्ञान और सोशल मीडिया का युग है जिसमें अशिक्षित होना अभिशाप के समान है। महिला शिक्षा एवं सशक्तिकरण, सामाजिक विकास की प्रमुख प्रकिया है। जो महिलाओं को सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास में भाग लेने में सक्षम बनाती है। महिलाओं को वास्तविक अर्थ में सशक्त बनाने में शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। इसलिए महिला शिक्षा आवश्यक है जिससे उनकी स्थिति में सुधार हो सके, ताकि वे बदलाव के लिए उत्प्रेरक का कार्य कर सकें। स्वस्थ जीवन शैली और पौष्टिक भोजन का अधिक सेवन मनुष्य को जीवन भर अच्छा स्वास्थ्य प्रदान कर सकता है। भारत सरकार महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार के लिए कई प्रयास कर रही है, गरीबी, लिंग भेदभाव और जनसंख्या में निरक्षरता उपयुक्त हस्तक्षेपों के कार्यान्वयन से जुड़ी प्रमुख समस्याएं हैं। जो भारत में महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को प्रभावित करते है।

मुख्य शब्द :- समाज, महिला, शिक्षा, साक्षरता, स्वास्थ्य, सशक्तिकरण, योजनाएं।

प्रस्तावना

महिलाओं का स्वास्थ्य जैविक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों से प्रभावित होता है। गहन अध्ययनों से पता चला है कि पूरे जीवन चक्र में महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक बीमार और विकलांग होती हैं। यह सुझाव दिया गया है कि महिलाएं विशेष रूप से कमजोर होती हैं, जहां बुनियादी मातृत्व देखभाल उपलब्ध नहीं होती है। जैसे जैविक कारकों की भागीदारी के कारण, महिलाओं को एचआईवी सहित यौन संचारित संक्रमण (एसटीआइ) होने का पुरुषों की तुलना में अधिक

Research Discourse (ISSN 2277-2014) : An International Peer-reviewed Refereed Research Journal, **Published by :** SARDI, Varanasi, U.P. (INDIA)
Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF, **IIJ Impact Factor :** 7.680, Vol. XV, No. III, July-September **2025,** Page No. : **72-7**
Received- 28/07/2025, Reviewed- 28/08/2025, Accepted- 29/08/2025

मिथक और पितृसत्ता

डॉ० संदीप कुमार यादव*
*असि०प्रो०, समाजशास्त्र विभाग, शहीद हीरा सिंह राजकीय स्ना. महाविद्यालय, धानापुर–चंदौली, उ०प्र०
डॉ० बंदनी कुमारी**
**असि०प्रो०, समाजशास्त्र विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी, उ०प्र०

सारांश : मानव सभ्यता में मिथक केवल धार्मिक या सांस्कृतिक आख्यान नहीं रहे, बल्कि सामाजिक मूल्यों, लैंगिक भूमिकाओं और सत्ता–संबंधों को वैधता प्रदान करने वाले विचार–तंत्र के रूप में भी कार्य करते रहे हैं। विशेष रूप से भारतीय, ग्रीक और मेसोपोटामियाई मिथकों में स्त्री को या तो देवी की आदर्शीकृत रूप–छवि में बाँधा गया है या फिर आज्ञाकारिता, त्याग और शुचिता के प्रतीक रूप में दर्शाया गया है। यह द्विविध छवि पितृसत्ता को नैतिक और सांस्कृतिक आधार उपलब्ध कराती है, जिससे पुरुष वर्चस्व को **"दैवीय"** स्वीकृति मिलती दिखाई देती है। मिथकों में निहित भाषा, रूपकों और कथानक–संरचनाओं के माध्यम से यह विश्लेषित किया गया है कि किस प्रकार स्त्री की एजेंसी को सीमित कर उसे परिवार, विवाह और प्रजनन संबंधी भूमिकाओं में केन्द्रित किया गया। सामाजिक नियंत्रण के उपकरण के रूप में मिथक समय–समय पर पुनर्व्याख्यायित होते रहे हैं ताकि पितृसत्ता बदलते सामाजिक संदर्भों में भी टिकाऊ बनी रहे। मिथकों का आलोचनात्मक पुनर्पाठ पितृसत्तात्मक धारणाओं को चुनौती देने और लैंगिक समानता की ओर वैकल्पिक सांस्कृतिक कल्पनाएँ विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

मुख्य शब्द : मिथक, पितृसत्ता, सामाजिक मूल्य, लैंगिक भूमिका, सौन्दर्य–मिथक आदि।

प्रस्तावना : एक व्यक्ति के रूप में स्त्री के समाजीकरण की प्रक्रिया में सामाजिक और धार्मिक मिथकों का महत्वपूर्ण योगदान होता हैद्य मिथक वह धार्मिक–सांस्कृतिक कथा, धारणा या विश्वास है जिसे समाज 'सत्य' मान लेता है, जबकि उसका आधार ऐतिहासिक, वैज्ञानिक या तार्किक न भी हो। यह सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था को बनाए रखने का साधन होता है। मिथक केवल धार्मिक–सांस्कृतिक कथा नहीं, बल्कि समाज द्वारा गढ़ी गई धारणाएँ हैं, जिनका उद्देश्य किसी व्यवस्था या मूल्य को स्थिर बनाए रखना होता है। मिथक अक्सर सामाजिक नियमों और शक्ति संरचनाओं को **"प्राकृतिक"** और **"सामान्य"** सिद्ध करते हैं।

अनेक मिथक सांस्कृतिक बिम्बों के रूप में भारतीय महिलाओं के अवचेतन में स्थापित होकर उनके समस्त जीवन को निर्धारित एवं निर्देशित करते हैं। सामान्यतया मिथक समाज विशेष के मूल्यों पर आधारित होते है या दुसरे शब्दों में हम कह सकते है कि निर्मित होने के पश्चात् सामाजिक–धार्मिक मिथक किसी समाज विशेष के मूल्यों और मानकों का संस्थाकरण करते हैद्य मिथक न केवल एक स्थापना है, बल्कि एक अपेक्षा भी।

भारतीय समाज के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं धार्मिक इतिहास के अलग–अलग कालखंडों में अनेक ऐसे मिथकों का निर्माण हुआ जो भारतीय समाज में महिलाओं की प्रस्थिति को परिभाषित और रेखांकित करती है एवं समाज में स्त्री–पुरुष संबंधों की व्याख्या करने के साथ ही लैंगिक भूमिकाओं को निर्मित करके पितृतंत्र की आधारशिला को मजबूत करती है। मिथकों में स्त्री के आदर्श रूप को परिभाषित किया जाता है जैसे–सीता, सावित्री और अनुसूया जैसे महिला पात्रों को पतिव्रता और सती के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो पतियों के प्रति असीम भक्ति और समर्पण दिखाती है। इन आदर्शों ने महिलाओं से अपेक्षित व्यवहार और भूमिकाओं की एक परिभाषा बनाई। इसी प्रकार मिथकों में पुरुष पात्रों को प्रमुखता और श्रेष्ठता प्रदान की गई है। अनेक महाख्यानों जैसे रामायण और महाभारत में पुरुष नायकों के साहस, शक्ति और निर्णय लेने की क्षमता का महिमामंडन किया गया है और स्त्री पात्रों को सहायक व अधीनस्थ भूमिका में प्रदर्शित किया है।

महिलाओं के जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं में प्रमुख स्थान धार्मिक और सांस्कृतिक मिथक, स्त्री देह से जुडी पवित्रता की अवधारणा, विवाह, वंश, जाति और आर्थिक स्तर इत्यादि का है, जहाँ तक भारतीय समाज में महिलाओं पर मिथक के प्रभाव की बात है स्त्री का मिथक समर्पण का मिथक हैद्य मिथक न केवल स्त्री के व्यक्तित्व का सतत घेराव किए रहता है, बल्कि इस प्रक्रिया को इतना स्वाभाविक, इतना मूलभूत और इतना सर्वव्यापी बना देता है कि वह अपनी पराधीनता का अनुभव भी नहीं कर पाती।[1]

शाब्दिक रूप में पितृसत्ता का तात्पर्य है 'पिता का शासन' इस पद का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है। प्रथम अर्थ में, इसका प्रयोग स्त्रियों पर पुरुषों की सत्ता को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता हैद्य द्वितीय अर्थ में, इस पद को घर–परिवार के एक ऐसे संगठनात्मक स्वरुप के लिए किया जाता है जिसमे सबसे वरिष्ठ पुरुष की (मुखिया) परिवार के सभी सदस्यों (कनिष्ठपुरुषों सहित) पर सत्ता होती है।[2] दुसरे शब्दों में हम कह सकते है कि **'पितृसत्ता'** शब्द की उत्पत्ति नारीवादी आन्दोलन की उपज है, यह एक ऐसी सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था है जिसमें स्त्री और पुरुष के आपसी सामाजिक संबंधों में गैर बराबरी की अभिव्यक्ति होती है और समाज की प्रत्येक संस्था चाहे वो परिवार हो या विवाह या कोई भी, सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों और समस्त सामाजिक संरचना में पुरुष को स्त्री के सन्दर्भ में वरियता प्रदान किया जाता हैद्य इस व्यवस्था में पुरुष द्वारा निर्मित मूल्यों और मानकों को स्त्रियों पर थोपा जाता है जिसके द्वारा स्वाभाविक तौर पर स्त्रियों को अधीनस्थ प्रस्थिति की ओर धकेला जाता है।

जहाँ तक मिथकों के प्रभाव की बात है तो अनेक समाजशास्त्रियों का मत है कि पितृतंत्र का आरम्भ ही सृष्टि से जुड़े मिथकों में है, जिसके अतर्गत स्त्री को सृष्टि में अनुपूरक और पुरुष की सहयोगी माना गया है। इसाई धर्म में प्रचलित, सृष्टि की उत्पत्ति संबंधी विचार जो आज भी पश्चिमी सभ्यताओं में जीवित हैं उनके अनुसार 'ईव' की उत्पत्ति 'आदम' के साथ नहीं हुई, ईव को न तो उसी मिट्टी से बनाया गया जिससे आदम को निर्मित किया था और ना ही किसी अन्य पदार्थ से उसका गढ़न हुआ बल्कि उसकी उत्पत्ति प्रथम पुरुष (आदम) के 'पसली' से हुई। उसकी उत्पत्ति भी स्वतंत्र नहीं है ईश्वर ने ईव की उत्पत्ति किसी

International Journal of Education and Science Research Review
Volume-12, Issue-6 Nov-Dec-2025 E-ISSN 2348-6457
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Impact Factor - 7.02 Email- editor@ijesrr.org

सात्विकता से साधना तकः सनातन संस्कृति में आहार परंपरा

श्रीमती दिव्या पाल
असिस्टेंट प्रोफेसर (गृह विज्ञान विभाग)
श्री अग्रसेन कन्या पी.जी कॉलेज वाराणसी
Email ID - divya.pal25@gmail.com

शोधसार

मानव जीवन में आहार का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आहार केवल शरीर को पोषण एवं ऊर्जा देने का साधन नहीं अपितु यह हमारी संस्कृति, दर्शन एवं आध्यात्मिकता का भी दर्पण है। भारतीय परंपरा के अनुसार आहार का व्यक्ति के स्वास्थ्य, मानसिक चेतना, आध्यात्मिक उन्नति पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। प्राचीन ग्रंथों में आहार का सात्विक, राजसिक एवं तामसिक वर्गीकरण का उल्लेख मिलता है। सात्विक आहार को पवित्र एवं साधना के लिए उचित माना गया है। सनातन आहार का आशय है कि ऐसा आहार जो प्राकृतिक, सात्विक और आयुर्वेदिक हो। यह आहार शुद्ध, संतुलित और पोषण से परिपूर्ण होता है एवं सकारात्मक विचार उत्पन्न करता है। उपनिषद , चरक संहिता, आयुर्वेद में सात्विक आहार को साधना की सफलता के लिए आवश्यक माना गया है। आयुर्वेद के अनुसार आहार दोषों (वात, पित्त, कफ) के संतुलन को नियमित रखता है एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में भी सहायक है। वर्तमान समय में व्यस्त जीवनशैली, असंतुलित आहार और प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के कारण मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापा विभिन्न प्रकार की बीमारियों में बढ़ोतरी हुई है। जिसके कारण सात्विक आहार का महत्व और भी बढ़ गया है। आधुनिक शोध के अनुसार संतुलित पौष्टिक आहार विभिन्न तरह की बीमारियों को दूर करने और जीवन को गुणवत्तापूर्ण बनाने में सहयोग करता है। सात्विक आहार प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वस्थ जीवनशैली का आधार है। जो शारीरिक संतुलन, मानसिक शांति और अच्छे विचारों को उत्पन्न करती है। पके हुए फल सात्विक होते हैं और जब इन फलों से अचार बनाए जाते हैं तो वे राजसिक प्रवृत्ति के हो जाते हैं। फलों से बने मादक पेय एवं मदिरा तामसिक प्रवृत्ति के बन जाते हैं। इस शोध पत्र के माध्यम से आहार परंपरा के सात्विक आयामों, साधना से संबंध एवं आधुनिक वातावरण में इसकी प्रासंगिकता का विश्लेषण किया गया है।

कुंजी शब्द – साधना, सात्विकता, सनातन संस्कृति, आहार परंपरा, आयुर्वेद ।

1. प्रस्तावना

सनातन संस्कृति में आहार केवल शरीर को पोषण ही नहीं देता बल्कि यह सामाजिक, मानसिक एवं आध्यात्मिकता से गहराई से जुड़ा हुआ है। भारतीय जीवन दर्शन में आहार को ‘अन्नं ब्रह्मोति व्यजानात’ कहा गया है अर्थात अन्न ब्रह्म

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

वर्तमान परिदृश्य में जनजातीय अधिकार, नीतियाँ और सशक्तिकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. साधना यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, सोशियोलॉजी
श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

भारत की जनजातियाँ देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विविधता का महत्वपूर्ण अंग हैं। यह समुदाय ऐतिहासिक रूप से वंचित, शोषित और उपेक्षित रहा है, जिसकी पहचान, अधिकार और संसाधनों पर पहुंच सीमित रही है। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने जनजातीय समुदायों के अधिकारों की रक्षा और उनके समग्र विकास के लिए अनेक नीतियाँ और योजनाएँ बनाई हैं। इनमें अनुसूचित जनजातियों को अनुसूचित क्षेत्र का दर्जा, वन अधिकार अधिनियम 2006, पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्र विस्तार) अधिनियम (PESA) 1996, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं में विशेष प्रावधान, तथा आर्थिक सहायता योजनाएं प्रमुख हैं।

जनजातीय सशक्तिकरण का तात्पर्य केवल आर्थिक विकास से नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, राजनीतिक भागीदारी, सांस्कृतिक संरक्षण और आत्मनिर्भरता से भी है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भूमि अधिकार और महिला सशक्तिकरण जैसे क्षेत्रों में ठोस प्रयासों के माध्यम से जनजातीय समुदायों को मुख्यधारा में लाने की पहल की जा रही है। विशेष रूप से जनजातीय महिलाओं की भूमिका सामाजिक परिवर्तन और सामुदायिक नेतृत्व में उल्लेखनीय रही है।

इस शोधपत्र का उद्देश्य जनजातीय अधिकारों की वर्तमान स्थिति, लागू नीतियों की प्रभावशीलता और सशक्तिकरण की दिशा में उठाए गए कदमों का विश्लेषण करना है, ताकि एक समावेशी और न्यायपूर्ण समाज की दिशा में सार्थक योगदान दिया जा सके।

भूमिका

भारत में अंग्रेजी शासन से पहले जनजातियों को अपनी शासन प्रणाली और जीवन शैली के लिए पूरी स्वतंत्रता हासिल थी। ब्रिटिश शासन के दौरान अनुसूचित जनजातियों को उपहास के नजरिये से देखा जाने लगा और उन्हें अपने पुश्तैनी अधिकारो से वंचित करने के लिए कई कानून लाए गए। साथ ही अधिकारों की मांग करने पर उनके साथ अपराधी जैसा व्यवहार किया गया।

जनजाति (आदिवासी) अधिकारो के अद्वितीय नायक बिरसा मुण्डा ने अपने आदिवासी समुदाय को जागरूक किया और ब्रिटिश शासन एवं जमींदारों के अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठायी। सन् 1895 में उन्होंने 'उलगुलान या विद्रोह' का निर्देशन किया, जिसका उद्देश्य जनजाति समुदाय को उनकी भूमि और अधिकारों की रक्षा करना। बिरसा मुण्डा ने आदिवासी समाज मे धार्मिक और सामाजिक सुधारों की शुरुआत की साथ ही उन्होंने मुण्डा लोगों को उनकी राजनीतिक मुक्ति के लिए एकजुट किया और उनमें राष्ट्रवाद की भावना को विकसित किया।

Research Discourse (ISSN 2277-2014) : An International Peer-reviewed Refereed Research Journal, **Published by :** SARDI, Varanasi, U.P. (INDIA)
Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF, **IIJ Impact Factor :** 7.680, Vol. XV, No. III, July-September **2025**, Page No. : **17-19**
Received- 06/07/2025, Reviewed- 06/08/2025, Accepted- 07/08/2025

किशोर–किशोरियों के नैतिक मूल्यों पर सोशल मीडिया का प्रभाव

डॉ0 अंजली त्यागी*
*असिस्टेंट प्रोफेसर, गृह विज्ञान विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी0जी0 कॉलेज, वाराणसी, उ0प्र0

सारांश : *संचार क्रिया समाज का जीवन है यह जीवन का वाहक, सर्जक, व गति है। संचार मानव के भावों, विचारों, अभिव्यक्तियों को समाज तक पहुँचाने का एक सरलतम साधन है, जिसके बिना मानव अभिव्यक्ति इतनी आसान न होती तथा मानव व पशु में अधिक अन्तर न होता। मानव अपनी भावनाओं को लिखकर, बोलकर समाज में एक से दूसरे तक पहुँचाने में सक्षम है साथ ही विचारों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचा रहा जिससे मानव समाज श्रृंखलाबद्ध हुआ। संदेशों के जरिये वह सबको प्रतिक्रिया में लाता है और सक्रियता बढ़ाता है। सोशल मीडिया के द्वारा व्यक्ति सात समन्दर पार बैठे लोगों से भी आसानी से बात कर सकता है। अपने आसपास के माहौल से अवगत करा सकता है। सीधे शब्दों में कहा जाये तो आज पूरी दुनिया मुट्ठी में समायी है और इसका श्रेय सोशल मीडिया को जाता है। निश्चित तौर पर इसके द्वारा व्यक्ति न केवल स्वयं को अभिव्यक्त करता है बल्कि खुद को पूरी तरह से समर्पित करता है, शायद इसलिये यह अभिव्यक्ति प्रदर्शन का सशक्त रूप बनकर सामने आया है। प्रस्तुत शोध पत्र मे किशोर किशोरियों द्वारा सोशल मीडिया के प्रयोग से उनके नैतिक मूल्यों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया गया है इसमें 400 माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों से सर्वेक्षण विधि द्वारा आकड़े प्राप्त किए गए।*

मुख्य शब्द : *सोशल मीडिया, नैतिक मूल्य, जनसंचार, आधुनिक तकनीकी युग, संचार क्रिया आदि।*

प्रस्तावना : मानव सभ्यता का इतिहास कदम–कदम पर संचार क्रिया के विकास की गवाही देता है। मनुष्य जाति के विकास में संचार के चिन्ह, संदेश लगातार विकसित होते गये हैं। मनुष्य की वाणी, संकेत, शारीरिक अभिव्यक्ति ने बहुत से गैर भाषिक माध्यम दिये और बहुत से प्रतीक धीरे–धीरे विकसित होते गये। अमूर्त अनुभव ने मूर्त संचार को जनसंचार में बदल डाला। निरन्तर संचार प्रक्रिया के विकास में गुणात्मक एवं मात्रात्मक परिवर्तन आये और तकनीकी विकास ने प्रिन्ट मीडिया के माध्यम से जनशिक्षा, शहरीकरण, औद्योगीकरण, जनजागरण कर आधुनिक समाज का निर्माण किया **(पचौरी, 2009)**। मानव जीवन सदैव प्रगतिशील है और उसने वह सतत् संचार के माध्यम से निरन्तर ज्ञान वृद्धि, ज्ञान वितरण एवं भाव अभिव्यक्ति को सरल बनाया।

सोशल मीडिया आधुनिक तकनीकी युग का एक नया चेहरा बन गया है जो लोगों के सर चढ़कर बोल रहा है। अधिकांश व्यक्ति किसी न किसी माध्यम के द्वारा आज सोशल मीडिया का प्रयोग कर रहे हैं। किशोरों व युवाओं की दिलचस्पी सोशल मीडिया के प्रति सर्वाधिक है, क्योंकि वर्तमान समय में यही एक ऐसा वर्ग है जो शिक्षित होने के साथ–साथ विभिन्न भाषाओं का जानकार है। शहरी व कस्बों के युवाओं के साथ–साथ गाँवों के युवाओं को सोशल मीडिया के नशे की गिरफ्त में आसानी से देखा जा सकता है। किशोर या युवा ऐसे हैं जो सोशल साइट्स पर कुछ अच्छा या बुरा करने में लिप्त हैं। किशोरों की मानसिकता बदल रही है उनका अधिकांश समय सोशल मीडिया पर व्यतीत होता है। वह अपने द्वारा पोस्ट किये गये फोटो–वीडियो या अन्य कन्टेंट पर अधिक से अधिक लाइक्स व कमेंट पाने के इच्छुक हैं जिसे वे अपनी मित्र मण्डली व समुदाय के मध्य एक उपलब्धि के रूप में देखते हैं। वे अपनी दुनिया में खोये हुये हैं। किशोरों व युवाओं का अधिकतर समय इन्हीं क्रियाओं में व्यतीत हो रहा है। वह वास्तविक दुनिया से दूर होते जा रहे हैं जिससे किशोरों मे सामाजिकता का अभाव हो रहा है। वे अपनी ही दुनिया में मस्त एवं आत्मकेन्द्रित हैं। सामाजिक सर्वेक्षणों में यह बात सामने आयी है कि मौजूदा दौर में सोशल साइट्स पर जो सामग्री मौजूद है उससे नयी पीढ़ी के बहक जाने के बहुत से खतरे पैदा हो गये हैं।

दुनिया के हर देश में प्रयोग किया जाने वाला सोशल मीडिया एक इंटरनेट बेस्ड अप्लीकेशन है, यह संचार माध्यम का आधुनिकतम स्वरूप है जिसमें सूचनाओं की संचारित करने की सुविधा व विशेषता उपलब्ध है। सोशल मीडिया एक रोचक युग्मशब्द है। एक ऐसा मीडिया जो न सिर्फ समाज के होने का दावा करता है, बल्कि प्रत्यक्षतः प्रत्येक व्यक्ति को अपनी अभिव्यक्ति सार्वजनिक करने का अवसर उपलब्ध कराता है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर 'मित्र' होने का साधारण अर्थ है कि दो प्रोफाइल एक दूसरे से लिंक हैं **Tufekci (2008)**। सोशल मीडिया ने प्रत्येक व्यक्ति को एक **'मीडिया हाउस'** का मालिक बना दिया है जहाँ वो अपनी अभिव्यक्ति को टेक्सट, वीडियो, फोटो इत्यादि के माध्यम से प्रस्तुत करता है **(दिव्यकीर्ति व जैन, 2013)**। व्यक्ति व्यक्तिगत व समूह दोनों प्रकार से सम्पर्क द्वारा घटनाओं व सूचनाओं का आदान–प्रदान करते हैं।

व्यक्तियों द्वारा सोशल मीडिया का प्रयोग कम्प्यूटर, लैपटाप, टेबलेट, स्मार्टफोन आदि के द्वारा करते हैं। फेसबुक, व्हाट्सएप, फेसबुक मैसेन्जर, इंस्टाग्राम ट्विटर, वी चैट, स्काइप आदि विभिन्न सोशल नेटवर्किंग साइट्स हैं **(विकीपीडिया, 2019)**। **Kaplan & Haenlein** (2010) ने सोशल नेटवर्किंग साइटों को परिभाषित करते हुए कहा– **''सोशल मीडिया का अर्थ ऐसे अर्न्तसम्बन्ध से है जहाँ वे सूचना निर्मित करते हैं, साझा करते हैं तथा विचार व सूचनाओं का आदान–प्रदान आभासी समुदायों और नेटवर्क में करते हैं।**''सोशल मीडिया के अधिक समय तक प्रयोग के कारण किशोर व युवा एकाकी हो रहे हैं।

सोशल मीडिया में ऐसी बहुत सी सामग्रियाँ उपलब्ध हैं जो कि किशोरों के कोमल मन को प्रभावित करती हैं। सोशल मीडिया में झूठ बोलना, झूठी खबरें फैलाना, अश्लील सामग्री प्रस्तुत करना आदि क्रियायें होती रहती हैं जिसमें किशोर आसानी से फंस जाते हैं तथा उनका बाल मन यह समझ नहीं पाता कि यह क्रियायें उनके लिये कितनी हानिकारक हैं और यह भ्रामक जानकारी उनकी नैतिकता को प्रभावित कर रही है। धीरे–धीरे उनके नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा तथा वे जीवन के महत्वपूर्ण उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा से दूर हो जा रहे हैं। सभी विषयों को ध्यान में रखकर वर्तमान समय में यह आवश्यक हो गया है कि किशोरावस्था में सोशल मीडिया के प्रयोग सम्बन्धी विषय पर गहन अध्ययन किया जाए कि सोशल मीडिया किस प्रकार से किशोरों को प्रभावित कर रहा है, किशोर–किशोरियों के नैतिक मूल्यों पर सोशल मीडिया का प्रभाव है।

उद्देश्य : किशोर–किशोरियों के नैतिक मूल्यों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना।

www.shodhpith.com ISSN (Online): 3049-3331

Shodhpith
International Multidisciplinary Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)
(Multidisciplinary, Bimonthly, Multilanguage)

Volume: 1 Issue: 6 November-December 2025

हिंदी सिनेमा में पौराणिक हिंदी फिल्मों का विकासः आधुनिक परिप्रेक्ष्य

डॉ0 अंजली त्यागी

असिस्टेंट प्रोफेसर, गृह विज्ञान विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी0जी0 कॉलेज वाराणसी

हिमांशु कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, बयालिसी पी. जी. कॉलेज जलालपुर, जौनपुर

शोध सार–

भारतीय समाज में पौराणिक कथाएं सदैव समाज के धार्मिक, नैतिक, दार्शनिक व सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली रही है। भारतीय सिनेमा में इन पौराणिक कथाओं का समावेश प्रारंभिक काल से ही होता रहा है । दादा साहब फाल्के निर्मित राजा हरिश्चंद्र (1913)से प्रारंभ होकर यह परंपरा स्वतंत्रता पूर्व काल में धार्मिक आदर्श एवं नैतिकता के उच्च आदर्शों के प्रचार प्रसार एवं स्वातंर्त्योत्तर काल में राष्ट्रीय चेतना के निर्माण हेतु सतत गति से गतिमान है। 1970 ई० से 2000 ई० के मध्य टेलीविजन धारावाहिकों जैसे रामायण एवं महाभारत ने इन आख्यानों को घर–घर पहुंचने का कार्य किया। सन 2000 ई० के बाद तकनीकी प्रगति ,एनीमेशन और 3क ग्राफिक्स ने पौराणिक कथाओं को नए आयाम प्रदान किये ,जिसमें धार्मिक एवं नैतिक उद्देश्यों की प्रतिपूर्ति के साथ–साथ व्यावसायिक एवं मनोरंजन परक प्रवृत्तियों के दर्शन भी होते हैं ।प्रस्तुत शोध पत्र हिंदी सिनेमा में पौराणिक आख्यानों की प्रस्तुति और उनके परिवर्तित स्वरूप का विश्लेषण करता है साथ ही साथ यह भी दर्शाता है कि सिनेमा का दायित्व केवल मनोरंजन तक सीमित न होकर समाज में धर्म , संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों की स्थापना भी है।

की–वर्ड्स– पौराणिक कथाएं, संस्कृति , लोक कथाएं, नैतिक मूल्य ', महाकाव्य ', धारावाहिक, सिनेमा,

परिचय–

पौराणिक कथाएं और लोक कथाएं कई संस्कृतियों और सभ्यताओं की नींव रही है। किसी भी संस्कृति में पौराणिक कथाओं के द्वारा वहाँ के विश्वासों ,मूल्यों और दर्शन को मूर्तरूप मे देखा जाता है, जो कि उस देश के हित में कार्य करता है और वहाँ के लोगो को एक स्वरूप में पिरोये रखता है। भारतीय संस्कृति में विभिन्न पौराणिक कथाएं व जनश्रुतियां प्रचलित हैं। इन पौराणिक कथाओं को समय –समय पर साहित्य एवं महाकाव्य के रूप में परिलक्षित किया गया है। जिन्हें आज हिन्दुओं की धार्मिक आस्था के प्रतीक के रूप में स्वीकार किया जाता है। इन पौराणिक कथाओं के पात्रों को धर्म के प्रतीकात्मक रूपों में स्वीकार करते है।

आज का सिनेमा दुनिया को इन्ही पौराणिक कथाओं, किस्सों व पात्रों को अपनी सिनेमाई कहानियो में हवाला देते हुए वर्तमान के आलोक में अतीत की पुनर्व्याख्या करके उन समकालीन मुद्दो पर प्रकाश डालते हैं।सिनेमा

सिनेमा में लोकगीत

डॉ॰ अपर्णा शुक्ला
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
संगीत विभाग
श्री अग्रसेन कन्या पी॰ जी॰ कॉलेज, वाराणसी

सारांश :

भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं व संस्कृति के आधार पर अनेकानेक लोकधुनों सहित लोकसंगीत व्याप्त है, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्र चाहे वो भोजपुरी बाहुल्य, पूर्वांचल क्षेत्र, अवधी क्षेत्र, बुन्देलखण्डी क्षेत्र, बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, आसाम, पूर्वोत्तर क्षेत्र, काश्मीर क्षेत्र, केरल, तमिलनाडु, गुजरात, बंगाल आदि सभी क्षेत्रों की अपनी-अपनी लोकधुनों व लोकगीत संगीत की पहचान है। यद्यपि इन्हीं लोक धुनों व लोकगीतों को फिल्म संगीत में भी समाहित किया गया है जो जनमानस को अत्यन्त ही पसन्द आयी व सिनेमा संगीत की ओर आकर्षित हुआ है। कुछ फिल्मों में तो यथावत अमुक-अमुक क्षेत्रों में लोकगीत-संगीत को दर्शाया गया तो कहीं पर केवल लोकधुनों को समाहित किया गया। फिल्म संगीतकारों में जैसे नौशाद साहब, ओपी नैय्यर, इस्माइल दरबार, ए॰ आर॰ रहमान, गुलाम हैदर, जयदेव ललित चौधरी आदि संगीतकारों ने अपनी फिल्म संगीत में लोकगीतों को तवज्जो दी है। अनेकानेक लोकगीतों जैसे गरबा, डांडिया, लावणी, विदेशिया, नौटंकी, बाउलगीत, भटियाली, कजरी, चैती, आल्हा आदि विधाओं को फिल्मों में स्थान देने लगे हैं।

बीज शब्द :

सिनेमा, चलचित्र, संगीत, लोकगीत, क्षेत्र, फिल्म।

सिनेमा भारतीय समाज के लिये बीसवीं शताब्दी की मनोरंजन और ज्ञान से भरी एक महत्वपूर्ण देन है। अधुना समय में चित्रपट ही एक ऐसी विधा है, जिसकी ओर प्रत्येक व्यक्ति आकर्षित होता है। प्रत्येक व्यक्ति इसके प्रभाव से परिचित है। चित्रपट एक ऐसा माध्यम है, जो मानव समाज के जीवन का सम्पूर्ण दपर्ण है। सही मायने में चित्रपट विभिन्न कलाओं को मंच एवं आधार प्रदान करता है और इनको समाज में सहज सुलभ होने में अपना योगदान देता है। प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से चित्रपट के माध्यम से लगभग सभी प्रकार की कलाओं का प्रदर्शन हो जाता है। जहां नाट्य एवं चित्रकला इससे सीधे सम्बन्ध रखती हैं, वहीं संगीत एवं नृत्य आदि कलाओं का सम्बन्ध भी उससे अटूट है।

फ्रांस वह सबसे पहला देश है और वहां के लोग बड़े भाग्यशाली हैं जिन्होंने सबसे पहले चित्रपट संगीत का आनंद लिया और चित्रपट संगीत को देखने और समझने का अवसर प्राप्त किया। 28 दिसंबर 1895 के दिन वह ग्रांड कैफे के बेसमेंट में यहाँ लूइस और आगस्ट उर्फ ल्युमियर भाईयों ने कुतूहल

04.pdf

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Volume 09, Issue 01, January 2026

The Evolving Trajectory of India's Climate Diplomacy: From Reaction to Positive Leadership

Dr. Sonam Chaudhari[1]
[1]Assistant Professor Political Science, Shri Agrasen Kanya Post Graduate College Varanasi, Uttar Pradesh

Received: 20 Jan 2026, Accepted: 25 Jan 2026, Published with Peer Reviewed on line: 31 Jan 2026

Abstract

One of the most pressing challenges of the 21st century is to address the negative consequences of climate change. The severity of the problem has given rise to a coordinated global response and as such, has expanded the domain of diplomacy to address climate related concerns. India has always been the voice of the developing world in climate negotiations. This paper examines the evolution and shifts in India's climate diplomacy. The paper is divided into three sections. The first section established a conceptual framework for the term climate diplomacy. The next section examines the salient features of India's climate diplomacy since its inception in the second half of the 20th century. The final section posits that, since 2014, India has transitioned from being a reactive participant to an active norm creator in global climate governance. It therefore examines the major climate-related initiatives undertaken under the leadership of Prime Minister Narendra Modi, highlighting India's strategic repositioning as an initiator of climate change related actions
Key Words: Climate Change, Climate Diplomacy, LiFe, Indian Solar Alliance, UNFCCC.

Introduction

Climate change has emerged as one of the most defining challenges of the twenty-first century, reshaping global politics, development pathways, and diplomatic engagements. As a country highly vulnerable to climate impacts—ranging from extreme heatwaves and erratic monsoons to sea-level rise and biodiversity loss—India occupies a critical position in the global climate governance architecture. Over the past three decades, India's climate diplomacy has undergone a significant transformation, evolving from a largely reactive and defensive posture to one characterized by constructive engagement, agenda-setting, and positive leadership at the international level. In the early phases of global climate negotiations, particularly during the 1990s and early 2000s, India's approach was primarily shaped by concerns over economic development, poverty eradication, and equity. India consistently emphasized the principle of *Common but Differentiated Responsibilities* (CBDR), arguing that historical emitters in the Global North must bear the primary burden of mitigation. This stance, while justified, often positioned India as a cautious actor focused on safeguarding national interests rather than shaping global solutions. Climate diplomacy during this period was thus reactive—responding to external pressures while resisting binding commitments perceived as constraints on development. However, the landscape of climate diplomacy began to shift markedly in the post-Paris Agreement era. Recognizing the interconnectedness of climate action with energy security, economic resilience, and global stature, India recalibrated its diplomatic strategy. The country moved beyond a narrow defensive framework to embrace a more proactive and solution-oriented role. Initiatives such as ambitious Nationally Determined Contributions (NDCs), leadership in renewable energy transitions, and the co-founding of the International Solar Alliance (ISA) signaled a decisive turn toward positive climate leadership. India's evolving climate diplomacy is also closely intertwined with its broader foreign policy vision, including South–South cooperation, multilateralism, and the aspiration to be a responsible global power. By championing issues such as climate finance, technology transfer, adaptation, and climate justice for developing countries, India has sought to bridge the gap between developed and developing nations. Simultaneously, domestic policy

11.	**The Role of Folk Arts in Indian Cultural Heritage** : A Comprehensive Analysis –Dr. Kanchan Mala Yadav	97
12.	**भक्ति संगीत की भारतीय परम्परा में वाद्य यंत्र का महत्व** –डॉ. अल्पना	104
13.	**साहित्य एवं संगीत का संक्षिप्त ऐतिहासिक यात्रा वृत्तांत** –डॉ. जितेन्द्र सिंह	110
14.	**भारतीय सांस्कृतिक विरासत में लोक कलाओं की भूमिका** : लोक संगीत के सन्दर्भ में –डॉ. नीता दिसावाल	116
15.	**पूर्व आधुनिक काल में, भारतीय संगीत की गायन शैली और घराने** : कलात्मक दृष्टिकोण –डॉ. निशा सिंह	120
16.	**सोशल मीडिया के माध्यम से भारतीय ज्ञान परंपराओं का पुनर्जीविन** : युवा में जागरूक सहभागिता का समाजशास्त्रीय अध्ययन –डॉ. शिल्पी चौबे	127
17.	**लोक के आलोक में संगीत का प्रवाह** –डॉ. शिवानी शुक्ला	133
18.	**भारत की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत के रूप में लोक संगीत परम्परा** –डॉ. सुमिता बनर्जी	138
19.	**भारतीय सांस्कृतिक विरासत में लोक संगीत की भूमिका** –डॉ. वेणु वनिता	142

■

ISBN : 978-81-994451-5-4

THE MAHARAJA SAYAJIRAO UNIVERSITY OF BARODA
सत्यं शिवं सुन्दरम्
Estd. 1949
Accredited Grade "A+" by NAAC

FPA @ 140
Faculty of Performing Arts
Estd. in 1886
The Maharaja Sayajirao University of Baroda

Indigenous System of Performing and Visual Arts and its relevance in Higher Education

(Compilation of Research Papers Received in the Refresher Course)

To Commemorate

140th years of the establishment of the Faculty of Performing Arts & 125th birth anniversary of Prof. C. C. Mehta

Editors
Prof. Ashutosh Biswal
Prof. Gaurang Bhavsar

Published by
Faculty of Performing Arts
The Maharaja Sayajirao University of Baroda

वैदिक कालीन संगीत शिक्षण

डॉ0 अपर्णा शुक्ला
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संगीत विभाग,
श्री अग्रसेन कन्या पी0जी0 कॉलेज, वाराणसी.

व्यक्ति के गुणों का निखार करके शिक्षा ही उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती है। मनुष्यों के अन्दर बहुत सी मानसिक शक्तियाँ विद्यमान रहती है लेकिन ये शक्तियाँ सुषुप्तावस्था में रहती है। उन्हें बाहर ले आने का कार्य, प्रस्फुटित एवं विकसित करने का कार्य शिक्षा करती है। शिक्षा एक आयोजित प्रक्रिया है जो किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के साथ–साथ उसमें परालौकिक तत्वों का समावेश करके सर्वांगीण विकास का कारण बनती है तथा उसे एक सभ्य, सुसंस्कृ त, सुयोग्य एवं सह्रदय व्यक्ति बनाती है शिक्षा का अर्थ केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना नहीं वरन् स्वतंत्र विचारशीलता से युक्त व्यक्तित्व का मुक्त विकास है। यह प्रक्रिया ऐसी नहीं है जो किसी समय प्रारम्भ हो और फिर एक निश्चित समयावधि पर समाप्त हो जाये यह ऐसी प्रक्रिया है जो जीवनपर्यन्त चलती है। मनुष्य अपने विभिन्न अनुभवों से अपने जीवन भर निरन्तर सीखता है। वह हर परिस्थिति पर हर किसी न किसी मनुष्य से निरन्तर सीखता है।

शिक्षा शब्द से यह ज्ञात होता है कि यह प्रक्रिया अपने आप में बड़ी व्यापक है। जन्म से मृत्युपर्यन्त हम अनेक वस्तुओं व्यक्तियों संस्थाओं एवं विचारों के भारतीय ऋषियों ने शिक्षा को जीवन का महत्वपूर्ण अंग बताया था शिक्षा से मनुष्य का जीवन परिष्कृत, सुविधायुक्त, समुन्नत और सुखद तो होता ही है एवं वह सामाजिक और सार्वजनिक नियमों का पालन करता हुआ सम्पूर्ण समाज को समुन्नत और सुखी करता है। वैदिक काल में शिक्षा का एकमात्र लक्ष्य छात्रों की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास इस तरह से करना था कि जिससे मोक्ष प्राप्ति के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति की जा सके, सादा जीवन व उच्च विचारों के महावाक्य से निर्दिष्ट होने वाली वैदिक शिक्षा में छात्रों के सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाता था।

वैदिक कालीन संगीत शिक्षा

प्राचीन काल से ही भारतीय शिक्षा में संगीत का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जिसके अन्तर्गत कल्पना, सूझ, सन्तुलन, स्वाभाविक, आत्मभिव्यक्ति, आत्मनियंत्रण, गति, व्यायाम तथा अन्य गुण संगीत विषय में समाहित है। संगीत शिक्षा का समाज के साथ अभिन्न सम्बन्ध रहा है। भारत में समय–समय पर जन मानस को धर्म, आध्यात्म भक्ति तथा अन्य प्रकार की उपदेशात्मक शिक्षा या प्रेरणा संगीत के द्वारा दी जाती थी। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों, महाकाव्यों आदि के आधार पर यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में संगीत शिक्षा एक अनिवार्य विषय के रूप में था। संगीत, शिक्षा, उत्तम नागरिक अर्थात् सुसंस्कृ त व्यक्तित्व निर्माण करने के लिए आवश्यक मानी जाती थी। संगीत शिक्षण से शारीरिक, बुद्धि का विकास, भावों का मार्गदर्शन, धैर्य, प्रदर्शन की योग्यता, अतः संगीत की महत्ता को ध्यान में रखते हुए ही संगीत का शिक्षा से सम्बन्ध स्थापित किया गया है।

प्राचीन काल में संगीत शिक्षा के बिना कोई व्यक्ति पूरी तरह शिक्षित तथा सुसभ्य नहीं माना जाता था। संगीत से सम्बन्धित व्यवसायियों के अतिरिक्त अन्य व्यवसायिक व्यक्ति भी संगीत का ज्ञान अवश्य प्राप्त करते थे। तत्कालीन समाज में प्रत्येक व्यक्ति भी संगीत का ज्ञान अवश्य प्राप्त करता था। संगीत शिक्षा से विशेष लाभ के कारण प्राचीन समय से ही मानव जीवन को सुसभ्य तथा समृद्ध बनाने के लिए संगीत शिक्षा को अनिवार्य माना गया, जिससे व्यक्ति धनोपार्जन करने के साथ–साथ कला का आनन्द भी प्राप्त करता था।

प्राचीन काल से ही संगीत शिक्षण की परम्परागत पद्धति का प्रचलन चला आ रहा है, जिसमें गुरू द्वारा शिष्य को शिक्षा प्रदान करना और शिष्य द्वारा शिक्षा ग्रहण करने की परम्परा विद्यमान थी। शिक्षा का आदान गुरू के द्वारा संचालित होना ही प्राचीन काल की संगीत शिक्षण की मुख्य विशेषता है। जिस प्रकार वेद, स्मृति, दर्शन, उपनिषद आदि सम्पूर्ण प्राचीन साहित्य श्लोकों, के रूप में कंठस्थ किया जाता था उसी प्रकार संगीत भी गुरूमुख से ही सीखा जाता था।

वैदिक काल में संगीत की परम्परा का वर्णन लोक व शास्त्र दोनों रूपों में मिलता है। पर्वों, उत्सवों व पारिवारिक उत्सवों पर सामाजिक नागरिकों द्वारा प्रयुक्त संगीत का स्पष्ट स्वरूप प्राचीन ग्रन्थों से बहुत अधिक नहीं मिलता क्योंकि शास्त्रबद्ध न होने के कारण वह लौकिक संगीत के रूप में ही प्रयुक्त किया गया परन्तु ऋषियों व संगीतविदों द्वारा धार्मिक कृत्यों में प्रयुक्त संगीत पूर्णतः नियमबद्ध था उसे संरक्षित करने व उसे अग्रिम पीढ़ी के सयोग्य पात्रों को सौंपने के उद्देश्य

P: ISSN No. 2321-290X
E: ISSN No. 2349-980X

RNI No. UPBIL/2013/55327

VOL.- XIII , ISSUE- V January - 2026
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

पंचायतीराज में महिला सहभागिता

Women Participation in Panchayati Raj

Paper Id : **21166** Submission Date : **2026-01-04** Acceptance Date : **2026-01-21** Publication Date : **2026-01-25**
This is an open-access research paper/article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International, which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.
DOI:10.5281/zenodo.18921960
For verification of this paper, please visit on http://www.socialresearchfoundation.com/shinkhlala.php#8

श्रृंखला देवी
असिस्टेंट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग
श्री अग्रसेन कन्या पी0जी0 कॉलेज
वाराणसीउत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारत में पंचायतो का अस्तित्व प्राचीनकाल से ही है। हमारी पौराणिक कथाओं में भी इसका उल्लेख मिलता है। रामायण, महाभारत काल के साहित्य में सभाओं समितियों तथा गाँवों का उल्लेख मिलता है। पंचायत शब्द प्राचीन एवं परम्परागत शब्द है, इसके साथ हमारी परम्पराओं की मधुरता जुड़ी हुई है, पंचायत शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'पंचायतम' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है गाँव के लोगों द्वारा चुने हुए पाँच लोगों का समूह। गाँधी जी ने भी पंचायत का शब्दिक अर्थ गाँव के लोगो द्वारा चुने हुए पाँच व्यक्तियों की सभा से लिया है। गाँधी जी ने स्वतन्त्र भारत के गाँवों के पुनर्निमाण की कल्पना कर नई समाज रचना का जो सपना संजोया स्वराज्य यानि गाँव में गाँव का राज्य। आचार्य विनाबा देश बनाना है। गाँव-गाँव में ग्राम स्वराज्य, स्थापित करके हम इस दिशा में आगे बढ़ सकते है।"[1]

सारांश का अंग्रेज़ी अनुवाद

Panchayats have existed in India since ancient times. They are also mentioned in our mythology. Literature from the Ramayana and Mahabharata period mentions assemblies, committees, and villages. The word Panchayat is an ancient and traditional term, associated with the sweetness of our traditions. The word Panchayat originates from the Sanskrit word "Panchayatham," meaning a group of five people elected by the villagers. Gandhiji also derived the literal meaning of Panchayat from a gathering of five people elected by the villagers. Gandhiji envisioned the reconstruction of villages in independent India and envisioned a new social structure, creating Swarajya, meaning the rule of the village within the village. Acharya Vinaba aims to create a country. We can move forward in this direction by establishing Gram Swarajya in every village.[1]

मुख्य शब्द

पंचायतीराज, स्वतन्त्रता, महिला सहभागिता, शासन व्यवस्था।

मुख्य शब्द का अंग्रेज़ी अनुवाद

Panchayati Raj, Independence, Women Participation, Governance System.

प्रस्तावना

भारत गाँवो का देश है, इसकी अधिकांश आबादी गाँवो में रहती है। गाँधी जी ने कहा है कि "स्वतन्त्रता का प्रारम्भ धरातल से होना चाहिए। प्रत्येक गाँव एक छोटा गणराज्य होना चाहिए। जिसके हाथ में सभी अधिकार हो। केन्द्र की सरकार सभी गाँवो में नहीं पहुँच सकती इसीलिए पंचायतीराज व्यवस्था को भारत में मजबूत बनाना चाहिए।"[2]

पंचायतीराज का तात्पर्य है कि गाँव के लोग अपने शासन व्यवस्था का उत्तरदायित्व स्वयं सम्भालते हुए अपने आवश्यकताओं के अनुरूप विकास योजना बनाये और उन्हें क्रियान्वित कर समस्याओं को हल करने के बारे में स्वयं ही निर्णय ले जिससे गाँव लोकतान्त्रिक व्यवस्था का अभिन्य अंग बन सके। आज पंचायते शासन की आधारभूत संस्था है। पंचायती राज संस्थाओं में गाँव को आत्मनिर्भर और विकेन्द्रीकृत बनाने के लिए महात्मा गाँधी के ग्राम स्वराज्य के सपने को ध्यान में रखा गया है। यह संस्था नियोजन और विकास की प्रक्रिया में लोगो की भागीदारी को सुगम बनाते है।

ISBN : 978-81-994451-5-4

THE MAHARAJA SAYAJIRAO UNIVERSITY OF BARODA
सत्यं शिवं सुन्दरम्
Estd. 1949
Accredited Grade "A+" by NAAC

FPA @ 140
Faculty of Performing Arts
Estd. in 1886
The Maharaja Sayajirao University of Baroda

Indigenous System of Performing and Visual Arts and its relevance in Higher Education

(Compilation of Research Papers Received in the Refresher Course)

To Commemorate

140th years of the establishment of the Faculty of Performing Arts &
125th birth anniversary of Prof. C. C. Mehta

Editors
Prof. Ashutosh Biswal
Prof. Gaurang Bhavsar

Published by
Faculty of Performing Arts
The Maharaja Sayajirao University of Baroda

स्वतंत्रता से पूर्व प्रकाशित तबला वाद्य विषयक उपलब्ध ग्रंथ

डॉ. वेणु वनिता
सहायक आचार्य एवं विभागाध्यक्षा तबला विभाग
श्री अग्रसेन कन्या पीजी कॉलेज, वाराणसी.
Email: venuvanita@gmail.com

सारांश

प्राचीन काल से ही हमें विभिन्न संगीत ग्रंथ प्राप्त होते रहें ,हैं विद्वानों ने नित्य प्रति के प्रयत्नों और प्रयोगों के द्वारा प्राप्त फलादेशों को सदैव सुरक्षित रखने के लिए ग्रंथों की रचना की। प्राचीन अधिकांशतः ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखे गए। संगीत के दो मुख्य पक्ष स्वर व लय में से स्वर पक्ष संबंधित साहित्य का प्रचुर मात्रा में सृजन हुआ जबकि ताल पक्ष जो लय को प्रदर्शित करने का माध्यम है, की अपेक्षाकृत अल्प मात्रा में ही चर्चा की गई। सामायिक अनुकूलता के कारण विभिन्न अवनद्ध वाद्य प्रचार में आए जिनका प्रतिनिधित्व वर्तमान में "तबला" कर रहा है। तबला वाद्य विषयक अधिकांश ग्रंथ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ही लिखे गए हैं परंतु तबला का आधार प्राण तत्व ताल प्राचीन काल से ही विवेचना का विषय रहा है। तबला वाद्य संबंधी जानकारी परवर्ती काल में लिखे गए ग्रंथों में प्राप्त होती है। संगीत की संस्थागत शिक्षा के सूत्रपात के पश्चात गायन विषय का जैसा विकास शिक्षित गायक वर्ग द्वारा हो रहा था वैसा तबला विषय में नहीं हो पाया जिस कारण बीसवीं शताब्दी के पूर्व के काल में तबले से संबंधित लेखन कार्य बहुत ही अल्प मात्रा में उपलब्ध हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व प्रकाशित कुछ तबला के ग्रंथ हैं जो प्राप्त होते हैं। उनमें बहुत संक्षिप्त रूप में संबंधित विवरण प्राप्त है । प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से स्वतंत्रता से पूर्व प्रकाशित तबला वाद्य विषयक उपलब्ध ग्रंथों का अध्ययन किया गया है एवं तत्संबंधी जानकारियां एकत्रित कर इसे समृद्ध एवं संपन्न किया गया है।

सूचक शब्द: तबला, पुस्तक, लेखन, प्रकाशन, शिक्षा,

विषय प्रवेश :

ग्रंथ ज्ञान के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कोश है, ज्ञान का व्यवस्थित विधान है ।कला के संरक्षण विकास एवं परिष्कार के लिए ग्रंथ रचना की आवश्यकता प्रतीत हुआ करती है विद्वज्जन के अनवरत प्रयत्नों से प्राप्त होने वाले फल ग्रंथों द्वारा ही सर्वाधिक सुरक्षित रखे जा सके हैं जो भावी पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते हैं। भावी पीढ़ियां उन्हीं फलों के आधार पर आगे प्रयत्न करती है जिससे उस कला एवं संस्कृति का उत्तर उत्तर विकास होता जाता है।

संगीत यद्यपि नाद का सूक्ष्म विज्ञान है तथापि संगीत आचार्यों ने ध्वनि ,नाद ,स्वर ,ताल आदि को भी ग्रंथों में आबद्ध कर देने में सफलता प्राप्त की है जिसका परिणाम है संगीत के विविध ग्रंथ। जैसे नाट्यशास्त्र संगीत रत्नाकर आदि आज के इलेक्ट्रॉनिक दृश्य श्रव्य उपकरणों के होते हुए भी संगीत के ग्रंथों का महत्व लेश मात्र भी कम नहीं हुआ है।

ग्रंथों का क्रमिक विकास :

प्राचीन काल से ही हमें विभिन्न संगीत ग्रंथ प्राप्त होते रहें विद्वानों ने नित्य प्रति के प्रयत्नों और प्रयोगों के द्वारा प्राप्त फलादेशों को सदैव सुरक्षित रखने के लिए ग्रंथों की रचना की उनका यह कार्य एक और अपने विचारों से समाज को परिचित कराते हुए उस समय की कला साहित्य और संस्कृति को विकसित करना था तो दूसरी और आगे आने वाली पीढ़ियों को प्राचीन कला और संस्कृति से परिचित कराते हुए भावी समय में उनका मार्गदर्शन करना भी था इन ग्रंथों की रचना विद्वानों एवं संगीत वेत्ताओं के गहन चिंतन मनन का प्रतिफल था उन्होंने अपना पूर्ण जीवन

Impact Factor : 7.625 (IIFS)
ISSN : 2393-8358

बढ़ते बाल अपराध में सूचना तकनीकी के प्रभाव का एक अध्ययन

अनामिका सिंह
पीएच.डी. छात्रा, गृह विज्ञान, श्री अग्रसेन कन्या पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री कॉलेज, वाराणसी
सम्बद्ध : महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रोफेसर (डॉ0) अनीता सिंह
शोध निर्देशिका, गृह विज्ञान विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री कॉलेज, वाराणसी

सारांश

दैनिक समाचार पत्रों में हम प्रतिदिन देश में बढते बाल अपराध की घटनाओं के बारे में पढते हैं और चिन्ता भी प्रकट करते हैं कि देश की युवा पीढी किस दिशा में जा रही है। प्रस्तुत अध्ययन में हमने यह जानने का प्रयत्न किया है कि आधुनिक सूचना तकनीक का फैला जाल, कम्प्यूटर, इन्टरनेट, मीडिया, मोबाईल संस्कृति आदि का प्रभाव बाल–अपराध की उत्पत्ति पर किस प्रकार पड़ा है तथा वे कौन से कारक हैं जो एक बालक को बाल–अपराधी बना देते हैं। इस अध्ययन में हमें आंकड़े एकत्र करने में बहुत ही कठिनाईयों का अनुभव हुआ क्योंकि बाल अपराधी के माता–पिता व और वह स्वयं भी अपने आपको अपराधी नही मानता है। हमने ये आंकड़े बाल सुधार गृह से प्राप्त किये हैं तथा अनुभव किया है कि पूरी सहानूभुति व स्नेह मिले तो यह बाल अपराधी तैयार ही नहीं होगें और अच्छा वातावरण देकर हम इनमें सुधार भी कर सकते हैं।

आधुनिक समय मे बाल–अपराधियों की बढती संख्या चिन्ता का विषय है। विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के समाजों में इनकी बढती संख्या वहाँ की सरकार और समाज दोनो के लिये विचारणीय है। हालाँकि ऐसा भी नहीं है कि बाल–अपराध केवल आधुनिक समाज की देन है। बाल–अपराधी हर काल और हर प्रकार के समाजों में मौजूद रहे हैं। हाँ, इतना जरूर हैं कि आधुनिक परिवर्तनशील समाजों में बाल–अपराधियों की संख्या बढ रही हैं। साथ ही बदलते समय के साथ–साथ बाल–अपराध की प्रकृति में तेजी से बदलाव आया है। साथ ही बाल–अपराधियों के प्रति सरकार और समाज के दृष्टिकोण में समय–समय पर बदलाव आते रहे हैं। बाल–अपराध की समस्या इसलिये भी महत्वपूर्ण है कि अगर समाज में बाल–अपराधियों की संख्या बढती है तो यह वैयक्तिक विघटन के साथ–साथ सामाजिक विघटन का भी सूचक है। इससे न सिर्फ समाज की शान्ति भंग होती है, बल्कि सामाजिक–आर्थिक विकास का मार्ग भी अवरूद्ध होता है। प्रस्तुत अध्ययन में हमने यह जानने का प्रयत्न किया है कि आधुनिक सूचना तकनीक का फैला जाल, कम्प्युटर, इन्टरनेट, मीडिया, मोबाईल संस्कृति आदि का प्रभाव बाल–अपराध की उत्पत्ति पर किस प्रकार पड़ा है तथा वे कौन से कारक है जो एक बालक को बाल–अपराधी बना देते हैं। हमने अपने अध्ययन में बाल–अपराध को रोकने के उपाय, सरकारी नीतियों तथा बाल–सुधार कार्यक्रमों को प्रभावशाली बनाने तथा बाल–अपराध जैसी गंभीर समस्या के समाधान हेतु ठोस सुझाव भी प्रस्तुत किये हैं। प्रस्तुत विवरण अध्ययन बाल–अपराध के कारणों एंव निदान के ऊपर प्रकाश डालने का एक प्रयास है, जिससे इस समस्या को समझने और उसका हल ढूँढने में बहुत हद तक मदद मिल सकती है।

शब्द कुंजी : बाल अपराधी, बाल सुधार गृह, सूचना तकनीक।

बाल–अपराध अर्थ व परिभाषा–

गिलिन एवं गिलिन के अनुसार, बाल–अपराधी एक ऐसा व्यक्ति है, जिसके व्यवहार को समाज अपने लिये हानिकारक समझता है और वह उसके द्वारा निषिद्ध है।

मोवरर के अनुसार, वह व्यक्ति जो जान–बूझकर इरादे के साथ तथा समझते हुए उस समाज की रूढियों की उपेक्षा करता है, जिससे उसका सम्बन्ध है, बाल–अपराधी कहलाता है।

प्रो. शेल्डन के अनुसार, बालक द्वारा एक सामान्य सीमा से भी अधिक गम्भीर अपराध करना ही बाल–अपराध है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि बाल–अपराध के अन्तर्गत बालकों के असामाजिक व्यवहारों को लिया जाता है। बालकों व किशोरों के ऐसे व्यवहार जो लोक–कल्याण की दृष्टि से अहितकर होते हैं, जिससे समाज के व्यवहार नियामक आदेशों एवं आदर्शों का उल्लंघन होता है। और जिससे सामाजिक संगठन को क्षति पहुँचती है। इन व्यवहारों को बाल–अपराध की श्रेणी में रखा जाता है। बाल–अपराधियों के निर्धारण में आयु एवं व्यवहार को काफी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। किस आयु–समूह के बच्चे को बाल–अपराधी की श्रेणी में रखा जाये, इस विषय पर अलग–अलग देशों में अलग–अलग मत है। अमेरिका जैसे देश में जहाँ 7

Scanned with OKEN Scanner

Vol. XVI
Number-2

ISSN 2320-3684
January 2026

SPECIAL ISSUE

EDUCATION AND DEVELOPMENT

A PEER REVIEWED JOURNAL

Chief Editors :
Prof. Sushma Yadava,
Principal, Shri Rameshwar Das Agarwal Girls PG College,
Navipur Road, Hathras (U.P.)

Mrs. Anamika Singh,
Assistant Professor, Department of Political Science,
Shri Rameshwar Das Agarwal Girls PG College, Navipur Road, Hathras (U.P.)

CONFERENCE NAME
Higher Education and Skill Development:
Prospects and Challenges for Employment in India 21–22 December, 2025

A Multidisciplinary International Peer Reviewed Journal

APH PUBLISHING CORPORATION

Scanned with OKEN Scanner

Digital Skill, Career Opportunity and Entrepreneurship for Youth

Dr. Sangeeta* and Prof. Anita Singh**

Abstract

Digital skill and entrepreneurship development are intertwined, focusing on using digital tools and knowledge to create, manage, and grow businesses. This involves acquiring digital competencies like digital marketing and AI to reach wider audiences and innovate, alongside traditional entrepreneurial skills in areas like management and strategy. Programs like the Skill India Digital Hub offer training in these areas to build an entrepreneurial mindset and enhance employability. The platform embodies the aspirations and dreams of millions of Indians who seek better opportunities and a brighter future as it extends industry-relevant skill courses, job opportunities, and entrepreneurship support. Driven by the vision to make skill development more innovative, accessible, and personalized in its embodiment, focusing on digital technology and Industry 4.0 skills, the state-of the- art platform will be a breakthrough in accelerating skilled talent hiring, facilitating lifelong learning and career advancement. The platform aligns perfectly with the vision for building DPI and the digital economy to promote digital skills and digital literacy. It is also a comprehensive information gateway for all government skilling and entrepreneurship initiatives, go-to hub for citizens in pursuit of career advancement and lifelong learning. Aadhaar / AI based Facial Authentication. Digital Verifiable Credentials empowers users to confidently present their qualifications, experiences and certifications in a digital format that carries an inherent layer of authenticity. Artificial Intelligence and Machine Learning Recommendations. Aadhaar based eKYC, Digital Learning, Citizen-Centric Approach, Mobile-First Approach, Scale and Speed, Security Measures, Interoperability, WhatsApp Chatbot, Ease of Doing Business such a digital platforms are providing opportunity for the youth in various field. Digital skill expertise provides job and make easy to complete difficult task in one click.

Keywords: Digital, skill, Entrepreneurship, Carrier Building, Smart work task.

*Assistant Professor, Head of Department, Home Science (Food & Nutrition), Ramabai Govt. Women P.G. College, Akbarpur-Ambedkarnagar U.P., India

**Head of Department, Home Science (Food & Nutrition), Shri A K P G College Parmandpur, Varanasi, E-mail:ishusangee@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

Shodh Drishti (An International Peer Reviewed Multidisciplinary Refereed Research Journal)
Vol. 17, No. 2, February 2026

Impact Factor : 8.125
ISSN : 0976-6650

गृह व्यवस्था में गृहणियों का योगदान

अनामिका सिंह
पीएच.डी. छात्रा, गृह विज्ञान, श्री अग्रसेन कन्या पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री कालेज, वाराणसी
सम्बद्ध : महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रोफेसर (डॉ0) अनीता सिंह
शोध निर्देशिका, गृह विज्ञान विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री कालेज, वाराणसी

सारांश

गृह प्रबंध में कुशल गृहणियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। गृह प्रबंध एक सहज कार्य नहीं है। इसके लिए यह आवश्यक है कि कार्यों को सुव्यवस्थित ढ़ंग से किया जाय और विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक सावधानी बरती जाय। घर और परिवारिक जीवन को सुदृढ़ बनाने में महिलाओं की भमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। गृह प्रबंध एक कला है और इसमें कुशलता व्यक्ति के बौद्धिक स्तर पर निर्भर करता है। यह एक मानसिक प्रकिया है। जो घर के अंदर निरंतर चलती रहती है। एक कला के रूप में गृह प्रबंध घर से ही आरंभ होता है। समकालीन परिवेश में भी घर प्रबंध का संपूर्ण दायित्व महिलाओं पर निर्भर है। यह किसी परिवारिक व्यवस्था के सुनियोजित और कमबद्ध विकास में सहायक होता है। महिलाओं की कार्यकुशलता और निपुणता गृह प्रबंध की प्रमुख कसौटी है।

मुख्य शब्द : गृहप्रबंध, गृहणियों, गृहणियों का योगदान/भूमिका।

प्रस्तावना

गृह प्रबंध या गृह व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालन में गृहणियों की भूमिका अहम होती है। प्रबंध में महिलाओं की भूमिका आज भी उल्लेखनीय है और यह गृह व्यवस्था के सफल संचालन में एक प्रमुख कारक है। सुव्यवस्थित घर उसी को समझा जाएगा, जहाँ परिवार के सभी व्यक्तियों को परिवारिक कार्यों की पूर्ति से संतुष्टि और आनंद प्राप्त हो, आपस में विरोध, द्वेष, ईर्ष्या आदि उत्पन्न न हो चाहे कार्य महिलाओं द्वारा संपादित किया जाए अथवा परिवार के सभी सदस्यों के सहयोग से कार्य किया जाए। यदि परिवार के सदस्यों में परिवारिक कार्यो से अंसतोष है, तो अधिक समय कार्य की बहस में ही समाप्त हो जाता है। अतः गृह प्रबंध का महत्व कार्य की समाप्ति से नहीं, बल्कि संतुष्टि से है। साधारणतः विभिन्न सामग्रियों से निर्मित रहने के किसी स्थान को गृह या घर कहते हैं, पर, सूक्ष्म रूप से केवल ऐसे ही रहने के स्थान को घर कहते हैं, जहाँ परिवारिक जीवन का वातावरण विद्यमान हो। ऐस ही घर में हम सांसारिक दुःख, चिंता तथा व्याकुलता से अपने को मुक्त पाते हैं, सुख–शान्ति का अनुभव करते है क्योंकि उसमें अपनत्व की भावना प्रधान होती है। जीवन में सुख और दुख दो पहलू होते हैं, परंतु आपसी सहयोग और सद्भाव दुख को भी सुख में बदल देते हैं।

परस्पर सहयोग से घर का सदस्य कर्मणनिष्ठ होकर शारीरिक और मानसिक विकास करते हुए अपने चरम लक्ष्य पर पहुँच जाते हैं। घर में माता – पिता भाई बहन और कभी – कभी कुछ रिश्तेदार भी एक ही छत के नीचे रहते हैं और एक गृहस्थी की रचना करते है। एक गृहस्थी में नारी घर की विभिन्न किर्याकलापों को करते हुए महिलाओं की मुख्य भूमिका निभाती है। हालांकि, आज स्त्री व पुरूष संयुक्त रूप से घर व परिवार के दायित्यों का निर्वाह करते हुए प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। महिलाए कामकाजी बन रही है अतः पुरूषो नें परिवार की भलाई के लिए दाहित्यों के निर्वहन में भागीदारी लेनी शुरू कर दी है, किन्तु सम्पूर्ण गृह प्रबंध संबंधी वैज्ञानिक और व्यवहारिक ज्ञान एवं सुव्यवस्थित तौर तरीका के सफल कियान्वयन में महिलाओं के रूप में परिवार की स्त्री/महिला की भूमिका अद्वितीय है। घर, परिवार व संसाधनों के उचित उपयोग के लिए आवश्यक ज्ञान और प्रबंध की कौशल घर की महिलाओं में अधिक सुव्यवस्थित ढंग प्राप्त ज्ञात हुए है। घर वह स्थान है, जहाँ व्यक्ति सुख के साथ परिवारिक जीवन व्यतीत करता है। सहयोग और सहानुभति के साथ व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास करते हुए अपने अधिकार, कर्त्व्य और उत्तरदायित्वों का पूर्ण पालन करता है। आराम से जीवन व्यतीत करने के लिए यह आव यक है कि घर में पर्याप्त स्थान हो। जिससे शारीरिक मानसिक भावनात्माक सामाजिक तथा नैतिक सभी

Scanned with OKEN Scanner